[Conference-Composition of Colours :December,2014] ISSN- 2350-0530
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v2.i3SE.2014.3571
INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

चित्रकला में रंग (प्रागैतिहासिक काल से वर्तमान काल तक के परिप्रेक्ष्य में)

डॉ. यतीन्द्र महोबे
सहायक प्राध्यापक चित्रकला,
शास. महिला महाविद्यालय नरसिंहपुर

प्रस्तावना –

'रंग' शब्द के उच्चारण मात्र से ही हम पाते हैं कि हमारे आस–पास का वातावरण रंगीन हो गया है। यदि जीवन में रंग का समावेश नहीं होता तो मनुष्य जीवन उल्लास, अभिलाषा, रस एवं सौंदर्य से कोसों दूर होता और ऐसे प्राणहीन जीवन की कल्पनामात्र से भय उत्पन्न होने लगता है।

चित्रकला में 'रंग' का महत्वपूर्ण योगदान है, रंग के अभाव में चित्रकला संपूर्ण नहीं हो सकती। उसमें एक अद्‌भूत सौंदर्य और आकर्षण होता है, जो दर्शक एवं कलाकार को अपनी ओर स्वतः खींचता है। ''रंगों के प्रभाव से हमारी भावनाओं का सीधा संबंध है। रंग से जीवन में गतिशीलता उत्पन्न हाती है। कलाकार का जीवन रंगों के ही साथ है, इसलिए यह आवश्यक है कि वह रंगों से पूर्णतः परिचित हो। आदिकाल से लेकर आज तक इस कला जगत में रंग वह तत्व है जिसे कलाकृति में आवरण के रूप में प्रयोग किया जाता है। रंग के अभाव में कलाकृति अधूरी रह जाती है। कला के इतिहास में रंगों का अपना विशिष्ट स्थान है रंग कलाकृति को जीवन प्रदान करते हैं।''[1]

भारतीय चित्रकला के परिप्रेक्ष्य में –

आदिकाल में मनुष्य की आकांक्षायें एवं इच्छाएं सीमित थीं फलस्वरूप चित्रों में रंगों का प्रयोग भी सीमित था। जैंसे–जैंसे मनुष्य की आकांक्षायें एवं इच्छायें प्रबल होती गईं। चित्रों में रंगों का प्रयोग भी बढ़ता गया। आज हम देखते हैं कि चित्रों में रंगों को तोड़–मरोड़ कर प्रस्तुत किया जाने लगा है, क्योंकि मनुष्य की इच्छायें एवं आकांक्षायें भी परिवर्तित हो गई हैं। ''प्रागैतिहासिक काल के जो भी चित्र मिले हैं, लगभग सभी उदाहरण– लाल, काले, पीले और सफेद रंग से बने हैं, और रंगों को लंबे समय तक चित्रों में सुरक्षित रखने के लिए पशुओं की चर्बी का प्रयोग होता था। रंगों में प्रधानता गेरू, हिरौंजी, रामरज तथा खड़िया की होती थी। इन रंगों के अतिरिक्त रासायनिक रंगों में कोयला या कागज का प्रयोग भी किया गया है। सपाट रंगों का प्रयोग तथा कहीं–कहीं गोलाई का आभास भी कराया गया है।''[2]

भारत में अजंता की चित्रकला भूतल का आश्चर्य है, ये दुलर्भ अभिव्यक्तियों रंग–प्रयोग के दृष्टिकोण से भी उच्च श्रेणी की है। कलाकारों ने यहाँ की आकृतियों में बड़े ही शालीनता के साथ रंगों का प्रयोग किया है। रंग कहीं भी भड़कीले प्रतीत नहीं होते, रंगों का प्रयोग करते समय रूपाकारों के भाव एवं सौंदर्य का पूर्ण ध्यान रखा गया है। रंगों के इस संतुलित प्रयोग से अजंता की मानवाकृतियों विशेषकर नारी आकृतियों में प्रेम, भक्ति, त्याग, उपासना धैर्य, श्रद्धा, स्नेह एवं अनुराग जैसे विविध भाव अंग–प्रत्यंग में दृष्टि गोचर होते हैं। यहाँ की चित्रकला में चित्र–सिद्धांतों एवं नियमों का पूर्ण रूप से ध्यान रखा गया है। जयपुर नरेश जय सिंह प्रथम की सभा के राज पुरोहित पंडित यशोधरा ने चित्रकला के जो छः अंग बताऐ हैं, उसका सफल प्रयोग अजंता में देख सकते हैं। छः अंगों के अंतर्गत रंग–व्यवस्था भी एक आवश्यक अंग है। यहाँ कलात्मकता के साथ रंगों का प्रयोग हुआ है। किस प्रकार के चित्र के लिए, किस प्रकार के रंगों का प्रयोग करना चाहिए और किस रंग के साथ कौन सा रंग मिश्रित करना चाहिए इसका उचित ध्यान अजंता के कलाकारों ने रखा है। ''अजंता चित्रावली में चित्रित नारी, नारी के सार्वभौमिक सौंदर्य का प्रतीक है। रंगों का सीमित एवं उचित प्रयोग ही नारि को भौतिक या शारीरिक आकर्षण से परे कर आध्यात्मिकता एवं वात्सल्य के समीप लाकर खड़ा करता है, और यही कारण है कि अधिकांश नारी चित्र अर्द्धनग्न अथवा पूर्ण नग्न होते हुए भी अश्लीलता से परे है। ''[3]

प्राचीन काल में रंग बनाने की विधि –

''चित्र सूत्र में बताया गया है कि प्रधान रंग पाँच प्रकार के हैं – श्वेत, पीला, पीलापन लिये श्वेत, कृष्ण और नीला। अपने बुद्धि के अनुसार भाव की कल्पना तथा रंगों का चयन और मिश्रण कर सैंकड़ों–हजारों प्रकार के रंग बनाये जा सकते हैं। रंग में तुलसी, भूनिंब, चंपा, कुश और मोलासिरी का काढ़ा मिलाने से टिकाऊपन आता है। सभी रंगों में स्थायित्व लाने के लिए सिंदूर और दूध का प्रयोग करना चाहिए। आज भी जो भित्ति चित्र अथवा पटचित्र जहाँ भी सुरक्षित हैं, वे सब निश्चय ही उपर्युक्त तकनीक से बने होंगे।''[4]

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

''रंग केवल चित्र की रंगतता ही नहीं है, वह बसंत के सौरभ को, सूर्य के उत्ताप को, मेघों की गर्जन को भी व्यंजित करता है। रंग का तत्व जब समझ में आ जाता है, तो काला रंग भी ज्ञान का आलोक भर देता है।''[5]

15वीं–16वीं शताब्दी में हम देखते हैं कि चित्रों में रंगों का प्रयोग पूर्ण रूप से किया जाने लगा, रंग के अभाव में चित्र की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी, मुगल, राजस्थानी, पहाड़ी आदि शैली के चित्रों में रंगों का विविध प्रयोग हुआ है, जो बड़ा ही आकर्षक एवं सौंदर्य से परिपूर्ण है। कलाकारों ने सपाट रंग पद्धति का प्रयोग कर अलंकारिक सौंदर्य को प्रधानता दी, साथ ही सोने–चांदी के रंगों का आरम्भ भी इसी समय से देखने मिलता है। भारत में जब ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपना आधिपत्य जमाया तब भारतीय रंग तकनीक में विदेशी रंग प्रभाव शामिल हुआ और तत्पश्चात् सपाट रंग पद्धति ने त्रि–आयामी रंग पद्धति का रूप ले लिया। साथ ही छाया–प्रकाश को महत्व दिया जाने लगा और तेल रंगों के प्रयोग से चित्र यथार्थवादी हो गये। समय परिवर्तन के साथ–साथ रंग–तकनीक में अनेकों परिवर्तन प्रारम्भ हो गये। तेल रंग, जल रंग, पोस्टर रंग, आदि कई कैमिकल रंगों का प्रयोग भी प्रारम्भ हो गया। बाजार में रंगों के अनेक टोन तैयार मिलने लगे कलाकार अपनी अभिव्यक्ति को रंगों के माध्यम से अभिव्यक्त करने में सफल हुआ।

आधुनिक कला और रंग –

आधुनिक कला के अंतर्गत 20वीं सदी के कलाकारों ने रंग को अपनी विशेष शैली बनाकर चित्र रचना प्रारम्भ की और अपने विचारों को विषयानुरूप रंग में परिवर्तित करने लगे। दर्शक भी रंगमयी कैनवास का पूर्ण आनंद लेने लगा। मैं भी चित्रकला के क्षेत्र में पिछले 20 वर्षों से निरंतर जुड़ा हूं और रंग–संयोजन में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की है। मैंने भी अपने कला जीवन में ऐसे अनेक चित्रों का निर्माण किया है जो रंग प्रधान रहे हैं। मेरे ये रंग प्रधान चित्र समय की मानसिक अवस्था को पूर्ण रूप से स्पष्ट करते दिखाई देते हैं। जब मेरी मानसिक अवस्था उदासी एवं परेशानियों से युक्त होती थी उस समय मेरे चित्रों में रंग बुझे हुए तथा कटीले प्रतीत होते हैं, लेकिन वहीं सुखद स्थिति में रंग ताजगी से भरे होते हैं। चित्र में रंगों का यह प्रयोग आत्मसंतुष्टि प्रदान करता है। फ्रायड के अनुसार – 'कला अचेतन की अभिव्यक्ति रंगों तथा रूपों में होती है, इनमें भी रंग अधिक विश्वसनीय है। रंग मन के सभी स्वरों को भेद देते हैं, जबकि रूप स्तरों के अनुसार बदल जाते हैं।''

आज आधुनिक चित्रकला में रंग–सौंदर्य पूर्णतः परिवर्तित हो गया है। कला में रंग–सौंदर्य का आनंद लेने के लिए आज की आँखों की जरूरत है यदि हम कल की आँखों से कला सौंदर्य का आनंद लेना चाहेंगे तो कतई ऐसा संभव नहीं है। प्राचीन कलाओं में रंगों का प्रयोग मात्र बाह्य सौंदर्य बोध के लिए किया जाता था, लेकिन आज वही ''रंग'' बाह्य सौंदर्य के साथ–साथ आंतरिक सौंदर्य जागृत करने का महत्वपूर्ण तत्व बन गया है। सौंदर्य सदा एक ही रहता है। वही रेखायें, वही रंग किन्तु उनके नित्य नये ढंग से किये गये प्रयोग एवं सामंजस्य से कलाकार नित नूतन आकर्षण उत्पन्न करते हैं। आज रंग अर्थ प्रधान हो गये है, लेकिन इन्हें समझने के लिए विशेष कला ज्ञान की आवश्यकता है। रंगों को तोड़–मरोड़ कर प्रस्तुत करने की कला आज बुरी तरह हावी हो चुकी है। ''समकालीन कलाकार वस्तुओं की ऊपरी छाया उतारना एकदम समाप्त करके रेखा या रंग से सुंदर आलेखन प्रस्तुत करता है, जो अपने आप में सुंदर लगते हैं और जिनमें कभी–कभी गूढ़ अर्थ भी सन्निहित होता है। कलाकार आज रंगों के प्रयोग में पारस्परिक पर्सपेक्टिव की अवलेहना करता है। अर्थात् दूर की वस्तु के आकार को छोटा और रंग को फीका नहीं दिखाता।''[6]

संदर्भ ग्रंथ सूची –

चित्रकला के मूल आधार, डॉ. मोहन सिंह मावड़ी, टी.एस. बिष्ट, तक्षशिला प्रकाशन, 98–ए, हिन्दी पार्क, दरियागंज, नई दिल्ली–110002, 1994, पृ.सं. 84 एवं 86।

भारतीय चित्रकला का इतिहास, तारक नाथ बड़ेरिया, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, 2/35 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 110002, पृ. सं. 08।

चित्रकला एवं लोक कला विविध आयाम, शेखर चन्द्र जोशी, प्रकाश बुक डिपो, बरेली–243122, 2009, पृ. सं. 17।

कला चिंतन ''सौंदर्यात्मक विवेचन'', विधुकौशिक, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, बेगम ब्रिज रोड मेरठ–250002, 2002, पृ.सं. 83।

कला चिंतन ''सौंदर्यात्मक विवेचन'', विधुकौशिक, इंटरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, बेगम ब्रिज रोड मेरठ–250002, 2002, पृ.सं. 84।

सौंदर्य, डॉ. राजेन्द्र बाजपेयी, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ आकादमी, भोपाल, 2004, पृ. सं. 193।

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art